# ''यह रोटी खाओ''
# ( 6:16-69 )

एक रविवार को एक छोटा लड़का आराधना के बाद घर लौटकर अपनी मां को बताने लगा कि उसने बाइबल क्लास में क्या सीखा। उसने शुरू करते हुए कहा, ''एक आदमी था, और उसका नाम मूसा था। वह इन लोगों को मिसर से निकालने के लिए उनके आगे-आगे चल रहा था कि वे देखते हैं कि उनके एक ओर समुद्र और दूसरी ओर शत्रु की सेना है।'' उसकी मां ने उसे कहना जारी रखने के लिए उत्साहित करते हुए पूछा ''फिर उसने क्या किया?'' ''उसने इंजीनियरों को बुलाया और उनसे लोगों को समुद्र पार करवाने के लिए एक अस्थाई पुल बनवाया। फिर, जब लोग दूसरे किनारे पर सुरक्षित पहुंच गए तो मिसरियों की सेना पुल पार करने लगी। तभी मूसा ने हवाई हमले करने का आदेश दिया और उन्होंने पुल उड़ा दिया।'' मां, बाइबल की विद्वान तो नहीं थी परन्तु इतना जरूर जानती थी कि यह कहानी इस प्रकार नहीं थी। उसने पूछा, ''क्या तुम्हारी टीचर ने बताया था कि ऐसा ही हुआ था?'' लड़के ने उत्तर दिया, ''नहीं, पर यदि मैं तुम्हें बताता कि मेरी टीचर ने ऐसे बताया है तो तुम कभी विश्वास न करती!''[1]

पांच हज़ार लोगों को भोजन कराना एक ऐसी ही कहानी है। यीशु ने पांच हज़ार पुरुषों की भूखी सेना को केवल पांच रोटियों और दो मछलियों से ही पेट भर भोजन कराया था। उन सब के पेटभर खाने के बाद रोटी के टुकड़ों के भरे बारह टोकरे इकट्ठे किए गए थे, इसलिए हैरानी की बात नहीं है कि ''वे [उसे] राजा बनाने के लिए आकर पकड़ना चाहते'' हों (6:15)। जो सामर्थ उन्होंने थोड़ी देर पहले देखी (और चखी) थी, वह उनकी समझ से बाहर थी।

जब यीशु ने देखा कि भीड़ उसे जबर्दस्ती राजा बनाना चाहती है तो वह ''पहाड़ पर अकेला चला गया'' (6:15)। मत्ती और मरकुस दोनों ने ही लिखा है कि यीशु ने पहले बारह चेलों को किश्ती में भेजा और फिर भीड़ को विदा किया (मत्ती 14:22; मरकुस 6:45)। यूहन्ना ने केवल इतना ही लिखा है कि ''यीशु, ... फिर पहाड़ पर अकेला चला गया'' (6:15)। फिर, शाम होने तक उसके चेले किश्ती में कफ़रनहूम की ओर चले गए। इस कहानी में यहां पर यीशु को छोड़ हर कोई बड़ी उलझन में लगता है। उन्हें लगता था कि वह शानदार सफलता से मुंह मोड़ रहा है। निश्चय ही वे हैरान थे कि, ''उसके मन में क्या है?''

उस रात बारह चेले और भी उलझन में थे। अंधेरे में जब वे नदी पार कर रहे थे तो जबर्दस्त तूफ़ान उठा जिससे उनकी किश्ती डूबने लगी थी (6:16-18)। उसी समय उन्होंने

यीशु को पानी पर चलते हुए देखा। उनका डर देखकर, उसने उन्हें बताया, ''मैं हूं; डरो न'' (6:20)। उसके नाव पर चढ़ने तक वे कफ़रनहूम में पहुंच गए। उत्तेजना, आश्चर्य, अत्यंत प्रसन्नता, बहुत तनावपूर्ण निराशा, उलझन, भय, आतंक, राहत; चेलों को केवल एक ही दिन में इतने सारे अनुभव हो गए थे।

अगले दिन, जो भीड़ पहले उसके पीछे थी और जिसने रोटियां और मछलियां खाई थीं, यीशु को ढूंढ़ने लगी। यह जानकर कि वह कफ़रनहूम से था (अपनी वयस्क सेवकाई के दौरान उसके काम करने का मुख्य स्थान), उसे ढूंढ़ने के लिए अपनी किश्तियां उस ओर ले गए। यूहन्ना ने यह नहीं लिखा कि कितने लोग उस दिन गए थे परन्तु लगता है कि उनमें से अधिकतर लोग अभी भी यीशु को राजा का मुकुट पहनाना चाहते थे। कफ़रनहूम पहुंचने पर यीशु उन्हें आराधनालय में मिला (6:59)। वे नहीं जानते थे कि उन्हें यीशु का सबसे कठिन और महत्वपूर्ण उपदेश सुनना पड़ेगा क्योंकि उन्होंने यह सुनना था कि यीशु जीवन की रोटी है।

## शिक्षा (6:25-59)

**चेला बनना आसान ( 6:25-34 )**

सुसमाचार की यूहन्ना की पुस्तक के अपने अध्ययन में यहां तक आप यह जानकर हैरान नहीं होंगे कि यीशु ने अगले दिन प्रशंसा और स्वीकृति के विनम्र शब्दों से भीड़ का अभिवादन नहीं किया। उसी कठोरता से जो हमें निकुदेमुस को उसके जवाब देने के ढंग की याद कराता है (3:3), यीशु ने तुरन्त भीड़ को डांटा:

> मैं तुम से सच सच कहता हूं, तुम मुझे इसलिए नहीं ढूंढ़ते हो कि तुम ने अचम्भित काम देखे, परन्तु इसलिए कि तुम रोटियां खाकर तृप्त हुए। नाशमान भोजन के लिए परिश्रम न करो, परन्तु उस भोजन के लिए जो अनन्त जीवन तक ठहरता है, जिसे मनुष्य का पुत्र तुम्हें देगा, क्योंकि पिता, अर्थात परमेश्वर ने उसी पर छाप कर दी है (6:26, 27)।

यीशु ने जोर दिया, कि लोगों ने परमेश्वर की ओर से एक चिह्न देखा था। उन्हें पता चल गया था कि यीशु के जीवन में परमेश्वर का हाथ था परन्तु उन्हें उस सम्बन्ध की समझ नहीं आई, जो परमेश्वर उनके और यीशु में बनाना चाहता था। उन्हें पिता को दिखाने के लिए उस पर भरोसा करने के बजाय, भीड़ ने आश्चर्यकर्म से भोजन बनाने का अपना ही अर्थ निकाल लिया। हम कह सकते हैं कि उन्होंने विश्वास किया (एक अर्थ में) जबकि वास्तव में उन्होंने (इस अर्थ में कि यीशु ने यूहन्ना रचित सुसमाचार में वचन की परिभाषा दी) उस पर विश्वास नहीं किया।

यीशु ने यह भी महसूस किया कि भीड़ ने उसे अपनी सांसारिक आवश्यकताओं को पूरा करने वाला समझा था। वे ''रोटियां खाकर तृप्त'' हुए (6:26)। यीशु से केवल इस जीवन में

आशीष पाने के लिए उसके पीछे चलने वाले किसी भी व्यक्ति में यही बात कही जा सकती है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि कोई यीशु के पीछे इसलिए चलता हो क्योंकि उसे विश्वास है कि यीशु उसके व्यवसाय, परिवार या स्वास्थ्य में सुधार करेगा और उसकी रक्षा करेगा। बेशक यह सब सत्य हो सकता है, पर यीशु की सबसे बड़ी दिलचस्पी यह है कि उसके द्वारा लोग पिता को जान लें। इससे कम तो नकली धर्म है! ''चेला बनना आसान'' की धारणा कि वह हमें कुछ देगा, ऐसा विचार है जिसे यीशु ठुकराता है।

भीड़ यीशु से पूछने लगी, ''परमेश्वर के कार्य करने के लिए हम क्या करें?'' (6:28)। यीशु का उत्तर था, ''उसका कार्य यह है, कि तुम उस पर, जिसे उसने भेजा है, विश्वास करो'' (6:29)। फिर हमें याद दिलाया जाता है कि ''विश्वास'' वही है जो यूहन्ना रचित सुसमाचार में बताया गया है (20:31) और इसका अर्थ किसी बात को सत्य मानने से कहीं अधिक है। फिर लोगों ने मन्ना के विषय पर बात की, जो मूसा के समय में ''स्वर्ग से उतरी रोटी'' थी। यीशु ने उत्तर दिया कि परमेश्वर अब उन्हें मूसा के मन्ना से बड़ा है अर्थात ''सच्ची रोटी'' दे रहा है। कहानी में यहां पर लोगों का जवाब इस मोड़ पर यीशु के साथ अपनी बातचीत में सामरी स्त्री की तरह ही था (4:15): उन्होंने यीशु से कहा कि वह उन्हें उस रोटी में से कुछ दे। तब यीशु ने उनकी बिनती को उन्हें अपने पीछे चलने के गहरे अर्थ समझाने के अवसर के रूप में इस्तेमाल किया।

**चेला बनना कठिन ( 6:35-52 )**

''जीवन की रोटी मैं हूं'' (6:35) शब्द भीड़ के साथ यीशु के आमने-सामने होने पर उनके बीच में एक बम फटने की तरह होंगे। ''मैं हूं'' वाक्यांश जलती झाड़ी में से मूसा से परमेश्वर के ''मैं जो हूं सो हूं'' (निर्गमन 3:14ख) कहने के समान था। निश्चय ही यह कोई अचानक हुई बात नहीं थी अर्थात यीशु यूहन्ना रचित सुसमाचार में अपनी ईश्वरीयता के विषय में लोगों के प्रश्नों का सामना करता आ रहा था। फिर यीशु अपने आपको उस एकमात्र अर्थात परमेश्वर के रूप में प्रस्तुत करने के लिए आगे बढ़ा जो उनकी बड़ी से बड़ी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। बहुत बार, हम अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए परमेश्वर के पास आते हैं, जबकि हमारी वास्तविक आवश्यकता यह होती है कि परमेश्वर हमारी आत्मा की सबसे बड़ी आवश्यकताओं को पूरा करे। यीशु जानता था कि उनकी सबसे बड़ी आवश्यकता उनका पेट भरना नहीं बल्कि उनकी आत्मा को तृप्त करना है। उसने उन्हें उनकी आत्माओं को तृप्त करने वाले भोजन के रूप में अपने आपको प्रस्तुत किया। यीशु जानता था कि लोग भोजन तथा राजनीतिक स्वतन्त्रता जैसी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उसे ढूंढ़ रहे हैं। उसे मालूम था कि उनकी सबसे बड़ी आवश्यकता परमेश्वर है!

जवाब में लोग बुड़बुड़ाने लगे। फिर, हमें निर्गमन की पुस्तक की कहानी याद आती है जब इस्राएली बुड़बुड़ाते जा रहे थे जैसे परमेश्वर को उनकी परवाह ही न हो। यहूदी इसलिए बुड़बुड़ा रहे थे क्योंकि यीशु अपने आपको राजा बनाने की अनुमति नहीं दे रहा था।

कुछ लोग यीशु के सांसारिक परिवार की बातें करने लगे थे जो उन्हें उसकी साधारण शुरुआत लगती थी। लगता है कि वे उसे ''भविष्यवक्ता'' (6:14) मान सकते थे और उसे अपना राजा बनाने को उत्सुक थे परन्तु वे उसे उसकी परिपूर्णता में स्वर्ग से आया परमेश्वर का पुत्र नहीं मान सकते थे! उसकी शिक्षाओं से इतनी उलझन और परेशानी में पड़ी भीड़ से आपको क्या लगता है कि यीशु ने बाद में क्या किया। बेशक मेरा ध्यान विवाद को कम करना और सुनने वालों को सांत्वना देने पर हो सकता है परन्तु यीशु का निर्णय सबसे अधिक और बाइबल में कहीं भी पाई जाने वाली कठोर शिक्षा पर ज़ोर देना है!

**सम्पूर्ण चेलापन ( 6:53-56 )**

यीशु ने कहा, ''मैं तुम से सच सच कहता हूं जब तक मनुष्य के पुत्र का मांस न खाओ, और उसका लोहू न पीओ, तुम में जीवन नहीं'' (6:53)। मसीही विश्वास के आरम्भिक वर्षों में मसीही लोगों पर आदमखोर होने का आरोप लगाया जाता था। बाहर के लोग आम तौर पर मसीही लोगों की भाषा से स्तब्ध होते थे, विशेषकर जब वे यीशु के अपनी देह खाने और लहू पीने की बात को बार-बार सुनते थे! ऐसे कठोर शब्द कहने से उसका क्या तात्पर्य था?

भीड़ में बहुत से लोगों को उसकी बातें किसी पागल के चिल्लाने की तरह लगती होंगी, परन्तु यीशु यह ज़ोर दे रहा था कि वह मनुष्य के पुत्र से उचित सम्बन्ध रखने वाला है। यीशु विमुक्ति, मित्रों, सिपाहियों या प्रजा से कहीं अधिक चाहता था। यीशु यह ज़ोर देता था कि हर सच्चा अनुयायी ''मुझ में स्थिर बना रहता है, और मैं उस में'' (6:56)। उसने एक राजा के अपने लोगों के, एक सेनापति के अपनी सेना के, या एक रब्बी अर्थात धार्मिक गुरु के अपने छात्रों के निकट होने के विपरीत अपने अनुयायियों के अधिक निकट होना था। यीशु ने रोटी की तरह, उनके शरीर के प्रत्येक भाग में पचकर जज़ब होने पर ज़ोर दिया। अन्य शब्दों में यीशु कह रहा था, ''तुम्हें चाहिए कि मुझे अपने भीतरी अंगों में भी बस जाने दो।''

यीशु का यह संदेश आज भी वैसे ही चौंकाने और भयभीत करने वाला है जैसे यह दो हज़ार वर्ष पूर्व था। आज भी वह उन लोगों से जो उसके अनुयायी होना चाहते हैं, लापरवाही सम्बन्ध को नकारता है। वह आज भी हमारे उतना ही निकट होना चाहता है जितना हमारी नसों में लहू, हमारे फेफड़ों में सांस, या हमारी हड्डियों में गूदा है। वह हमारे जीवनों के गुप्त स्थानों में जाना चाहता है चाहे यह हमारे बैंक के खाते हों, हमारे वैवाहिक सम्बन्ध, या हमारी आकांक्षाएं। जीवन की रोटी के रूप में, उसे हमसे सौ प्रतिशत दृढ़ सम्बन्ध से कम स्वीकार नहीं होगा।

## प्रतिक्रिया (6:60-69)

**भीड़ ( 6:60-66 )**

यीशु का संदेश सुनकर भीड़ कुड़कुड़ाने लगी। उन्होंने माना कि ये शिक्षाएं ''कठिन''

(6:60) हैं। शिक्षाएं कठोर होने के कारण उनके मन भी कठोर हो गए थे। फिर बाइबल की सबसे दुखद आयतों में से एक में यूहन्ना ने लिखा, ''इस पर उसके चेलों में से बहुतेरे उल्टे फिर गए और उसके बाद उसके साथ न चले'' (6:66)। गलील में यीशु की सार्वजनिक सेवकाई में यह एक मोड़ था। इसके बाद उसे इतनी प्रसिद्धि और भीड़ उसके साथ नहीं हुई जितनी उस दिन थी जब उसने पांच हज़ार लोगों को खिलाया था। लोगों की भीड़ आई, उन्होंने स्वर्ग से उतरा भोजन खाया, वे रोमांचित हो गए थे, उन्होंने यीशु की कठिन शिक्षा को सुना और अन्त में वे वहां से चले गए थे। वे यीशु को राजा के रूप में स्वीकार करने को तो तैयार थे परन्तु अपने प्रभु के रूप में ग्रहण करने को नहीं।

**बारह चेले ( 6:67-69 )**

निराश और क्रुद्ध लोगों के अपने पास से चले जाने से, यीशु ने बारह चेलों की ओर मुड़कर उनसे कहा कि यदि वे भी उसे छोड़कर जाना चाहें तो जा सकते हैं। पतरस ने, जैसा कि कई बार वह करता था, इस का अर्थ समझे बिना परन्तु बड़ी समझदारी से उत्तर दिया। उसने कहा, ''हे प्रभु हम किस के पास जाएं? अनन्त जीवन की बातें तो तेरे ही पास हैं''(6:68)। पतरस और दूसरे ग्यारह चेले भी सम्भवत: दूसरे लोगों की तरह ही उलझन तथा परेशानी में थे, परन्तु उन्हें समझ आ गई थी कि यीशु ही उनकी आशा है। बेशक उन्हें लगा कि उसने उन्हें निराश किया है फिर भी वे उसमें विश्वास करते रहे। दूसरों के चले जाने और उनके वहां रहने पर, हम देखते हैं कि बारह चेलों को दूसरे वास्तविक विश्वास अर्थात बाइबल की ओर ले जाया जाता है।

फ्रांसिस शेफ़र[2] का मानना था कि जो कुछ पतरस ने इन आयतों में कहा, उससे परमेश्वर में विश्वास करने के लिए लोगों को लाने का रास्ता खुला है। परमेश्वर के बारे में अविश्वासी लोगों को बताते समय, शेफ़र उन्हें विश्वास के विकल्पों पर ध्यान देने को कहता था। वह उनसे पूछता था कि क्या वे संसार में पूरी तरह से सही या गुमराही में जीने को तैयार हैं जहां कोई आशा न हो और मानवीय गौरव का आधार न हो। वह मानता था कि मानवीय जीव ऐसी व्यर्थता में नहीं रह सकते। शेफ़र लोगों को पतरस के अहसास कि ''हे प्रभु हम किस के पास जाएं? अनन्त जीवन की बातें तो तेरे ही पास हैं'' तक लाने के लिए निराशा के किनारे तक नहीं लाया।

## सारांश

इस पाठ को समाप्त करने से पहले हमें एक और प्रतिक्रिया पर ध्यान देने की आवश्यकता है और वह है भीड़ को यीशु का जवाब। यूहन्ना रचित सुसमाचार में पहले अध्याय से ही यह दिखाया गया है कि परमेश्वर का अनन्त वचन आकर ''हमारे बीच डेरा करने'' के लिए बहुत आगे बढ़ गया। वह मनुष्य जाति की खोज में आया। जब भीड़ उसकी शिक्षा से दूर जाने लगी तो उसने क्या किया? यीशु से बढ़कर किसी ने भी कभी लोगों का उद्धार नहीं चाहा फिर भी वह खड़े होकर उन्हें जाते देखने को तैयार था। मुझे विश्वास है कि उसका मन

दुखी था परन्तु वह उनके वहां रहने पर उन्हें अपना मधुर संदेश सुनाने के लिए उनके पीछे-पीछे नहीं भागा, उन्हें वापस लाने के लिए वह उनके सामने गिड़गिड़ाया नहीं! वह जीवन की रोटी था और है तथा ''मनुष्य के पुत्र का मांस खाने, और उसका लोहू पीने'' (6:53) से कम कुछ भी स्वीकार नहीं करेगा। यह एक कठोर परन्तु एकमात्र संदेश है जिसमें जीवन है!

जैसे यीशु ने प्रारम्भिक अनुयायियों को अपने पीछे चलने की कठिन पसन्द चुनने के लिए कहा था, वैसे ही आज वह हमसे कहता है। हमारे लिए इस कठोर संदेश को स्वीकार करना आवश्यक है उसके बिना हम बिल्कुल खोए हुए हैं और विश्वास की अपनी यात्रा में हम उसकी आज्ञाएं मानने तक चलते जाएं। यह सफ़र विश्वास (अपने जीवन से यीशु पर भरोसा करके), मन फिराने (अपने पापपूर्ण जीवन से फिरने) और बपतिस्मे (''जल और आत्मा से [नया] जन्म'' लेने; यूहन्ना 3:5) से आरम्भ होती है। फिर, यूहन्ना रचित सुसमाचार के शब्दों का इस्तेमाल करें, तो हमारे लिए उसमें वैसे ही बने रहना आवश्यक है जैसे वह हम में बना रहता है (यूहन्ना 6:56; 15:4-7)।

---

पाद टिप्पणियां

[1]लियोन मौरिस, *एक्सपोज़िटरी रिफ्लैक्शंस ऑन द गॉस्पल ऑफ़ जॉन* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशी.: बेकर बुक हाउस, 1988), 175 में बताया गया। [2]फ्रांसिस ए. शेफर, *द गॉड हू इज देयर* (डाउनर्स ग्रोव-Ill.: इन्टरवर्सिटी प्रैस, 1968), 126-31.